नियमसार पद्यानुवाद

(१)
जीवाधिकार

वर नंत दर्शनज्ञानमय जिनवीर को नमकर कहूँ।
यह नियमसार जु केवली श्रुतकेवली द्वारा कथित।।१।।

जैन शासन में कहा है मार्ग एवं मार्गफल।
है मार्ग मोक्ष उपाय एवं मोक्ष ही है मार्गफल।।२।।

सद् ज्ञान–दर्शन–चरण ही हैं 'नियम' जानो नियम से।
विपरीत का परिहार होता सार इस शुभ वचन से।।३।।

है नियम मोक्ष उपाय उसका फल परम निर्वाण है।
इन ज्ञान–दर्शन–चरण त्रय का भिन्न–भिन्न विधान है।।४।।

इन आप्त–आगम–तत्त्व का श्रद्धान ही सम्यक्त्व है।
सम्पूर्ण दोषों से रहित अर सकल गुणमय आप्त है।।५।।

भय भूँख चिन्ता राग रुष रुज स्वेद जन्म जरा मरण।
रति अरति निद्रा मोह विस्मय खेद मद तृष दोष हैं।।६।।

सम्पूर्ण दोषों से रहित सर्वज्ञता से सहित जो।
बस वे ही हैं परमातमा अन कोई परमातम नहीं।।७।।

पूरवापर दोष विरहित वचन जिनवर देव के।
आगम कहे है उन्हीं में तत्त्वारथों का विवेचन।।८।।

विविध गुणपर्याय से संयुक्त धर्माधर्म नभ।
अर जीव पुद्गल काल को ही यहाँ तत्त्वारथ कहा।।९।।

जीव है उपयोगमय उपयोग दर्शन ज्ञान है।
स्वभाव और विभाव इस विधि ज्ञान दोय प्रकार है।।१०।।

अतीन्द्रिय असहाय केवलज्ञान ज्ञान स्वभाव है।
सम्यक् असम्यक् पने से यह द्विविध ज्ञान विभाव है।।११।।

मतिश्रुतावधि मन:पर्यय चार सम्यग्ज्ञान हैं।
कुमति कुश्रुत अर कुवधि ये तीन मिथ्याज्ञान हैं।।१२।।

स्वभाव और विभाव दर्शन भी कहा दो रूप में।
पर अतीन्द्रिय असहाय केवल स्वभावदर्शन ही कहा।।१३।।

चक्षु अचक्षु अवधि त्रय दर्शन विभाव कहे गये।
पर्याय स्वपरापेक्ष अर निरपेक्ष द्विविध प्रकार है।।१४।।

नर नारकी तिर्यंच सुर पर्यय विभाव कही गईं।
कर्मोपधि निरपेक्ष सुध पर्यय स्वभाव कही गई।।१५।।

कर्मभूमिज भोगभूमिज मानवों के भेद हैं।
अर सात नरकों की अपेक्षा सप्तविध नारक कहे।।१६।।

चतुर्दश तिर्यंच एवं देव चार प्रकार के।
इन सभी का विस्तार जानो अरे लोक विभाग से।।१७।।

यह जीव करता-भोगता जड़कर्म का व्यवहार से।
किन्तु कर्मजभाव का कर्ता कहा परमार्थ से।।१८।।

द्रव्यनय की दृष्टि से जिय अन्य है पर्याय से।
पर्यायनय की दृष्टि से संयुक्त है पर्याय से।।१९।।

(२)
अजीवाधिकार

द्विविध पुद्गल द्रव्य है स्कंध अणु के भेद से।
द्विविध परमाणु कहे छह भेद हैं स्कंध के।।२०।।

अतिथूल थूल रु थूल-सूक्षम सूक्ष्म-थूल रु सूक्ष्म अर।
अतिसूक्ष्म ये छह भेद पृथ्वी आदि पुद्गल खंध के।।२१।।

भूमि भूधर आदि को अति थूल-थूल कहा गया।
घी तेल और जलादि को ही थूल खंध कहा गया।।२२।।

धूप छाया आदि को ही थूल-सूक्षम जानिये।
चतु इन्द्रिग्राही खंध सूक्षम-थूल हैं पहिचानिये।।२३।।

करम वरगण योग्य जो स्कंध वे सब सूक्ष्म हैं।
जो करम वरगण योग्य ना वे खंध ही अति सूक्ष्म हैं।।२४।।

जल आदि धातु चतुष्क हेतुक कारणाणु कहा है।
अर खंध के अवसान को ही कारयाणु कहा है।।२५।।

इन्द्रियों से ना ग्रहे अविभागि जो परमाणु है।
वह स्वयं ही है आदि एवं स्वयं ही मध्यान्त है।।२६।।

स्वभाव गुणमय अणु में इक रूप रस गंध फरस दो।
विभाव गुणमय खंध तो बस प्रगट इन्द्रिय ग्राह्य है।।२७।।

स्वभाविक पर्याय पर निरपेक्ष ही होती सदा।
पर विभाविक पर्याय तो स्कंध ही होता सदा।।२८।।

परमाणु पुद्गल द्रव्य है ह्न यह कथन है परमार्थ का।
स्कंध पुद्गल द्रव्य है ह्न यह कथन है व्यवहार का।।२९।।

सब द्रव्य के अवगाह में नभ जीव पुद्गल द्रव्य के।
गमन थिति में धर्म और अधर्म द्रव्य निमित्त हैं।।३०।।

समय आवलि भेद दो भूतादि तीन विकल्प हैं।
संस्थान से संख्यातगुण आवलि अतीत बखानिये।।३१।।

जीव एवं पुद्गलों से समय नंत गुणे कहे।
कालाणु लोकाकाश थित परमार्थ काल कहे गये।।३२।।

जीवादि के परिणमन में यह काल द्रव्य निमित्त है।
धर्म आदि चार की निजभाव गुण पर्याय है।।३३।।

बहुप्रदेशीपना ही है काय एवं काल बिन।
जीवादि अस्तिकाय हैं ह्न इस भांति जिनवर के वचन।।३४।।

होते अनंत असंख्य संख्य प्रदेश मूर्तिक द्रव्य के।
होते असंख्य प्रदेश धर्माधर्म चेतन द्रव्य के।।३५।।

असंख्य लोकाकाश के एवं अनन्त अलोक के।
फिर भी अकायी काल का तो मात्र एक प्रदेश है।।३६।।

एक पुद्गल मूर्त द्रव्य अमूर्तिक हैं शेष सब।
एक चेतन जीव है पर हैं अचेतन शेष सब।।३७।।

(३)
शुद्धभावाधिकार

जीवादि जो बहितत्त्व हैं, वे हेय हैं कर्मोपधिज।
पर्याय से निरपेक्ष आतमराम ही आदेय है।।३८।।

अरे विभाव स्वभाव हर्षाहर्ष मानपमान के।
स्थान आतम में नहीं ये वचन हैं भगवान के।।३९।।

स्थिति अनुभाग बंध एवं प्रकृति परदेश के।
अर उदय के स्थान आतम में नहीं ह्न यह जानिये।।४०।।

इस जीव के क्षायिक क्षयोपशम और उपशम भाव के।
एवं उदयगत भाव के स्थान भी होते नहीं।।४१।।

चतुर्गति भव भ्रमण रोग रु शोक जन्म-जरा-मरण।
जीवमार्गणथान अर कुलयोनि ना हों जीव के।।४२।।

निर्दण्ड है निर्द्वन्द है यह निरालम्बी आतमा।
निर्देह है निर्मूढ है निर्भयी निर्मम आतमा।।४३।।

निर्ग्रन्थ है नीराग है नि:शल्य है निर्दोष है।
निर्मान-मद यह आतमा निष्काम है निष्क्रोध है।।४४।।

स्पर्श रस गंध वर्ण एवं संहनन संस्थान भी।
नर, नारि एवं नपुंसक लिंग जीव के होते नहीं।।४५।।

चैतन्यगुणमय आतमा अव्यक्त अरस अरूप है।
जानो अलिंगग्रहण इसे यह अर्निदिष्ट अशब्द है।।४६।।

गुण आठ से हैं अलंकृत अर जन्म-मरण-जरा नहीं।
हैं सिद्ध जैसे जीव त्यों भवलीन संसारी कहे।।४७।।

शुद्ध अविनाशी अतीन्द्रिय अदेह निर्मल सिद्ध ज्यों।
लोकाग्र में जैसे विराजे जीव हैं भवलीन त्यों।।४८।।

व्यवहारनय से कहे हैं ये भाव सब इस जीव के।
पर शुद्धनय से सिद्धसम हैं जीव संसारी सभी।।४९।।

हैं हेय ये परभाव सब ही क्योंकि ये परद्रव्य हैं।
आदेय अन्तस्तत्त्व आतम क्योंकि वह स्वद्रव्य है।।५०।।

मिथ्याभिप्राय विहीन जो श्रद्धान वह सम्यक्त्व है।
विभरम संशय मोह विरहित ज्ञान ही सद्ज्ञान है।।५१।।

चल मल अगाढ़पने रहित श्रद्धान ही सम्यक्त्व है।
आदेय हेय पदार्थ का ही ज्ञान सम्यग्ज्ञान है।।५२।।

जिन सूत्र समकित हेतु पर जो सूत्र के ज्ञायक पुरुष।
वे अंतरंग निमित्त हैं दृग मोह क्षय के हेतु से।।५३।।

सम्यक्त्व सम्यग्ज्ञान पूर्वक आचरण है मुक्तिमग।
व्यवहार-निश्चय से अत: चारित्र की चर्चा करूँ।।५४।।

व्यवहारनय चारित्र में व्यवहारनय तपचरण हो।
नियतनय चारित्र में बस नियतनय तपचरण हो।।५५।।

(४)
व्यवहारचारित्राधिकार

कुल योनि जीवस्थान मार्गणथान जिय के जानकर।
उन्हीं के आरंभ से बचना अहिंसाव्रत कहा।।५६।।

मोह एवं राग-द्वेषज मृषा भाषण भाव को।
हैं त्यागते जो साधु उनके सत्यभाषण व्रत कहा।।५७।।

ग्राम में वन में नगर में देखकर परवस्तु जो।
उसके ग्रहण का भाव त्यागे तीसरा व्रत उसे हो।।५८।।

देख रमणी रूप वांछा भाव से निर्वृत्त हो।
या रहित मैथुनभाव से है वही चौथा व्रत अहो।।५९।।

निरपेक्ष भावों पूर्वक सब परिग्रहों का त्याग ही।
चारित्रधारी मुनिवरों का पाँचवाँ व्रत कहा है।।६०।।

जिन श्रमण धुरा प्रमाण भूलख चले प्रासुक मार्ग से।
दिन में करें विहार नित ही समिति ईर्या यह कही।।६१।।

परिहास चुगली और निन्दा तथा कर्कश बोलना।
यह त्यागना ही समिति दूजी स्व-पर हितकर बोलना।।६२।।

स्वयं करना कराना अनुमोदना से रहित जो।
निर्दोष प्रासुक भुक्ति ही है एषणा समिति अहो।।६३।।

पुस्तक कमण्डल संत जन नित सावधानीपूर्वक।
आदाननिक्षेपणसमिति में ग्रहण-निक्षेपण करें।।६४।।

प्रतिष्ठापन समिति में उस भूमि पर मल मूत्र का।
क्षेपण करें जो गूढ प्रासुक और हो अवरोध बिन।।६५।।

मोह राग द्वेष संज्ञा कलुषता के भाव जो।
इन सभी का परिहार मनगुप्ति कहा व्यवहार से।।६६।।

पापकारण राज दारा चोर भोजन की कथा।
मृषा भाषण त्याग लक्षण है वचन की गुप्ति का।।६७।।

मारन प्रसारन बंध छेदन और आकुंचन सभी।
कायिक क्रियाओं की निवृत्ति कायगुप्ति जिन कही।।६८।।

मनोगुप्ति हृदय से रागादि का मिटना अहा।
वचनगुप्ति मौन अथवा असत् न कहना कहा।।६९।।

दैहिक क्रिया की निर्वृत्ति तनगुप्ति कायोत्सर्ग है।
या निवृत्ति हिंसादि की ही कायगुप्ति जानना।।७०।।

अरिहंत केवलज्ञान आदि गुणों से संयुक्त हैं।
घनघाति कर्मों से रहित चौतीस अतिशय युक्त हैं।।७१।।

नष्ट कीने अष्ट विध विधि स्वयं में एकाग्र हो।
अष्ट गुण से सहित सिध थित हुए हैं लोकाग्र में।।७२।।

पंचेन्द्रिय गजमदगलन हरि मुनि धीर गुण गंभीर अर।
परिपूर्ण पंचाचार से आचार्य होते हैं सदा।।७३।।

रतन त्रय संयुक्त अर आकांक्षाओं से रहित।
तत्त्वार्थ के उपदेश में जो शूर वे पाठक मुनी।।७४।।

आराधना अनुरक्त नित व्यापार से भी मुक्त हैं।
जिनमार्ग में सब साधुजन निर्मोह हैं निर्ग्रन्थ हैं।।७५।।

इसतरह की भावना व्यवहार से चारित्र है।
अब कहूँगा मैं अरे निश्चयनयाश्रित चरण को।।७६।।

●●●